त्रायोदशः पाठः किशोराणां मनोविज्ञानम् | Chapter 13 Kishoranan Manovigyanam Notes

त्रायोदशः पाठः
किशोराणां मनोविज्ञानम्

पाठ-परिचय-ग्यारह से पन्द्रह वर्ष के बीच आयुवाले बच्चों को किशोर कहा जाता है। इसी समय लड़के अपने भावी जीवन की नींव रखते हैं तथा उसके अनुरूप अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयास करते हैं। यह सच है कि यही अवस्था बच्चों के भावी जीवन का आधार होती है, इसलिए वे एक-दूसरे से आगे निकलने के लिए जी-तोड़ परिश्रम करना आरंभ करते हैं।

जीवने परिवर्तनं प्रकृतेर्नियमः। न सदा एकरूपता तिष्ठति। अतएव कृष्णः गीतायां 'कौमारं यौवनं जरा' इति रूपेण जीवने{वस्थात्रायं निर्दिशति। तत्रा कौमारमेव किशोरावस्था कथ्यते। बालावस्थायुवावस्थयोरन्तराले च सा भवति। उच्चविद्यालये{ध्ीयानाः किशोराः किशोर्यश्च भवन्ति। विद्यालये सामान्यशिक्षाक्रमेण ते परम्परागतं पाठमेवानुसरन्ति। ¯कतु तेषां शारीरिको मनोवैज्ञानिकश्च पक्षावुपेक्षितौ स्तः। न शिक्षका न चाभिभावका विषये{स्मिन् दत्तावधनाः।
किशोराणां किशोरीणां च शरीरं मनश्च युवावस्थां प्रति प्रवर्तेते। शरीरे तावन्मार्दवं बाललक्षणं शनैः शनैः परुषतां प्राप्नोति, यौवनलक्षणानि च समाविशन्ति। शरीरेण सह मनसो{पि वृत्ति-विकारः आगच्छति। अनुशासनं तदानीमप्रियं भवति, स्वैरवृत्तिः स्वच्छन्दता वा पदं धरयति मानसे। विशेषरूपेण एकलपरिवारे स्थितानां किशोराणां तु सैव कथा, संयुत्तफपरिवारे तु सहिष्णुता बन्ध्ुभावो वा न विनश्यति। सम्पन्नपरिवारे पालिताः किशोराः यदा कदा स्वमित्राणि विकृतानि कुर्वते। तेषां महत्त्वाकाङ्क्षां वर्ध्यन्ति। एते च स्वपरिवारं प्रति आक्रोशभावमपि प्रकटयन्ति। किशोरेषु विकसितस्य तादृशस्य दिवास्वप्नस्य परिशोध्नं परिमार्जनं चावश्यकं भवति। तदर्थं शिक्षकाभिभावकयोर्मध्ये काले काले संवादः विचारविमर्शश्चानिवार्यः।
अर्थ-जीवन में परिवर्तन प्रकृति का नियम है। जीवन में हमेशा एकरूपता नहीं। रहती। इसीलिए श्रीकृष्ण गीता में कौमार्य, यौवन तथा बुढ़ापा के रूप में जीवन को तीन भागों में बाँट दिया है। वहाँ कौमार्य को ही किशोर कहते है। यह अवस्था बाल्यवास्था तथा युवावस्था के बीच में होती है। उच्च विद्यालयों में पढ़ने वाले किशोर-किशोरियाँ होते है। विद्यालय में सामान्य शिक्षा द्वारा वे परम्परागत पाठ को ही पढ़ते हैं। किन्तु उनका शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक पक्ष उपेक्षित रहते हैं। न तो शिक्षक और न ही अभिभावक इस विषय में सावधान रहते हैं।
किशोर और किशोरियों का शरीर एवं मन युवावस्था में बदल जाते हैं। शारीरिक विकास के कारण बाल्यावस्था की मुदता धीर-धार कठोरता में बदल जाती है। और जवानी के सारे लक्षण प्रतीत होने लगते है। शरीर के साथ मन भी दूषित हो जाते है। उस समय अनुशासन अपिय लगने लगता है। मन में मनमाने ढंग से रहने का विचार आ जाता है। खासकर एकल परिवार में किशोरों की स्थिति तो ऐसी है किन्तु संयुक्त परिवार में सहनशीलता तथा बंधुत्व की भावना नष्ट नहीं होती। सम्पन्न परिवार में पले हए किशोर अपने मित्रों को कभी-कभी दषित कर देते है अर्थात् उनके चरित्र का बिगाड देते
है। उनको आकांक्षा को बढ़ा देते हैं और अपने परिवार के प्रति आक्रोश प्रकट करते है। किशोरों में विकसित इस प्रकार की अवास्तविक कल्पना को रोकना अति आवश्यक है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शिक्षक एवं अभिभावक के बीच समय-समय पर विचारविमर्श होना अनिवार्य है।

जीवनं प्रति आशावदभिः किशौरैर्भवितव्यम्। किन्तु स्वकीयं मूलं साध्नजातं च न विस्मरणीयम्। समाजे सुलभानां साध्नानामुपयोगेन स्वाभिलाषस्य पूरणं श्रेयः। लक्ष्यं च दूरतो दृश्यमानमपि सदानुबन्ध-शालिभिर्लभ्यते। एतदर्थं महतां जनानां जीवनचरितस्यापि यदा कदानुशीलनम् अनुसरणं च कर्तव्यम्। नारीणां जागरणकाले{धुना किशोर्यो{पि स्वाभिलाषस्य सोद्देश्यतां पूरयितुं क्षमाः सन्ति। नैकमपि कार्यं सम्प्रति ताभिरलभ्यं दृश्यते। तथापि संकल्पस्य दृढता, साध्नानां स्वाभीष्टदिशया च प्रवर्तनमपि काम्यं स्यात्। साध्नाभावे कुण्ठापालनं नोचितम्। अन्यथा प्रतिभाया विनाशः, सुलभस्यापि साध्नस्यानुपयोग इति। अत्रा नीतिकारस्य पद्यांशस्याभिनवः अर्थः अनुसरणीयःμ

अर्थ-किशोरावस्था से ही जीवन के प्रति आशानान् होना चाहिए। किन्तु अपनी क्षमता और साधन को नहीं भूलना चाहिए। समाज में उपलब्ध साधनों के उपयोग द्वारा अपनी इच्छा को पूर्ति करना श्रेयस्कर होता है। और लक्ष्य को दूर देखते हुए भी सदा द्रद निश्चयवालों द्वारा ही प्राप्त किया जाता है. इसलिए महान् लोगों के जीवन चरित का कभी-कभी अध्ययन तथा अनुसरण करना भी कर्त्तव्य अर्थात् आवश्यक है।

नारी के जागरणकाल में अब किशोरियाँ भी अपनी इच्छा के अनुसार अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सक्षम है। वर्तमान समय में कोई भी ऐसा कार्य नहीं है जो किशोरया के लिए अलभ्य है। अर्थात् वे हर क्षेत्र में विद्यमान हैं। फिर भी दृढ़ निश्चय के साथ साधनों का मनोनुकूल दिशा से अपेक्षित उपयोग हो। साधन के अभाव में कुण्ठित होना अनुचित है। क्योंकि इससे प्रतिभा नष्ट होती है और साधनों का दुरूपयोग होता है। यहाँ नीतिकार के पद्यांश का नवीन अर्थ अपनाने योग्य है

दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या
यत्ने कृते यदि न सिध्यति को{त्रा दोषः ।

अर्थ-भाग्य को छोड़कर अपनी सामर्थ्य भर परिश्रम करो। यदि प्रयल करने पर भा सफलता नहीं मिलती है तो इसमें किसका दोष है ? किसी का नहीं।

भाव-भाव यह है कि जब कोई व्यक्ति अपनी शक्ति से पुरुषार्थ प्राप्त करना चाहतात. किन्तु प्रयत्न करने के बावजूद वह असफल हो जाता है तो ऐसा स्थिति म कसा पर दाप थोपने के बजाय तब तक परिश्रम करना चाहिए जब तक उद्देश्य का पात न हो जाए। भाग्य को दोष देकर हाथ-पर-हाथ रखकर बैठ जाना उचित नहीं है।

अर्थात् प्रयत्नस्य पफलं यदि सत्वरं न लभ्यते तदा चिन्तनीयमेतद् यन्मम प्रयत्ने कः कुत्रा च दोषः आसीत्। सिद्ध कथं न जाता इति। पुनः प्रयासो{वधेयः। 'प्रारब्ध्मुत्तमजना न परित्यजन्ति' इति कवेर्वचनम् । शिक्षाकाले तु वर्तमानकार्यमेव चिन्तयेत् । नातिदूरं पश्येत् अन्यथा वर्तमानमपि गतं स्यात् श्रेष्ठः कालो वर्तमानः इति सुध्यिः कथयन्ति। संकल्पस्य दृढता, दृष्टेः व्यापकता चेति किशोरजीवनस्य मन्त्राद्वयं सदा स्मरणीयम्।

अर्थ-अथात् प्रयत्न का परिणाम यदि शीघ प्राप्त नहीं होता है तब यह साचना क मेरे प्रयास म कहा और कौन-सी त्रुटि या कमी थी. सफलता क्यों नहीं मिली। फिर स प्रयास करना चाहिए। महापुरुष आरंभ किये हुए कार्य का त्याग नहीं करते हैं, ऐसा कवियों का मानना है।

विधार्थी जीवन में जो उपस्थित कार्य के विषय में सोंचना चाहिए। उच्छाकांक्षी न होना चाहिए क्योंकि इससे वर्तमान भी खो जाता है। विद्वानो का मानना है कि वर्तमान ही सबसे मुल्यवान् समय होता है। दृढ़ संकल्प और व्यापक दृष्टि किशोरावस्था के ये दो मंत्र सदा स्मरण रखने योग्य है।

https://www.evidyarthi.in/